[Shukla., Vol.1 (Iss.1): August, 2014]
ISSN- 2350-0530(O) ISSN- 2394-3629(P)
Impact Factor: 2.035 (I2OR)
DOI: 10.29121/granthaalayah.v1.i1.2014.6312

INTERNATIONAL JOURNAL OF RESEARCH – GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository

Social

# Gandhi's religious thinking "in the context of Jainism"
# गाँधी का धार्मिक चिन्तन "जैन धर्म के संदर्भ में"

**Dr. Pradeep Shukla** [*1]
[*1] Professor, History Department Guru Ghasidas University, Bilaspur, India

## ABSTRACT

***Gandhi ji was a worshipper of truth and non-violence, so religion is the system of moral discipline of the world for him. Gandhi ji has accepted religion as the basic element of life and society. Gandhi ji has included every work of the world in the field of religion, whether it is personal or social. Gandhi ji's religion is not communalism. Gandhi ji had deep faith in Hinduism but it was not due to communalism. Gandhi ji accepted the spiritual and moral essence of Hinduism. He used to say that the essence of religions like Judaism, Christianity, Islam etc. is the same as that of Hinduism. The search for truth is the basic element of Hinduism. The reason for his attraction towards Hinduism was that this religion believes in living peacefully with other religions and does not claim that it is the best religion.***

## शोध सारांश

गाँधी जी सत्य और अहिंसा के पुजारी थे अतः धर्म उनके लिए संसार की नैतिक अनुशासन की व्यवस्था है। गाँधी जी ने धर्म को जीवन और समाज का आधारभूत तत्व स्वीकार किया है। गाँधी जी ने धर्म के क्षेत्र में संसार के प्रत्येक कार्य को चाहे वह व्यक्तिगत हो या सामाजिक, में शामिल किया है। गाँधी जी का धर्म सम्प्रदायवाद नहीं है। गाँधी जी को हिन्दू धर्म में गहन आस्था थी किन्तु यह सम्प्रदायवाद के कारण नहीं थी। गाँधी जी ने हिन्दू धर्म के आध्यात्मिक तथा नैतिक सार को ग्रहण किया। उनका कहना था कि यहूदी, ईसाई, इस्लाम आदि धर्मों का सार वही है जो हिन्दुत्व का। सत्य की खोज हिन्दू धर्म का मूल तत्व है। हिन्दू धर्म के प्रति उनके आर्कषण का कारण यह था कि यह धर्म अन्य धर्मों के साथ शान्तिपूर्वक रहने में विश्वास करता है और दावा नहीं करता कि यह सर्वश्रेष्ठ धर्म है।

**Cite This Article:** Dr. Pradeep Shukla, "GANDHI'S RELIGIOUS THINKING "IN THE CONTEXT OF JAINISM"" International Journal of Research – Granthaalayah, Vol. 1, No. 1 (2014): 59-61.

## 1. प्रस्तावना

गाँधी जी सत्य और अहिंसा के पुजारी थे अतः धर्म उनके लिए संसार की नैतिक अनुशासन की व्यवस्था है। गाँधी जी ने धर्म को जीवन और समाज का आधारभूत तत्व स्वीकार किया है। गाँधी जी ने धर्म के क्षेत्र में संसार के प्रत्येक कार्य को चाहे वह व्यक्तिगत हो या सामाजिक, में शामिल किया है। गाँधी जी का धर्म सम्प्रदायवाद नहीं है। गाँधी जी को हिन्दू धर्म में गहन आस्था थी किन्तु यह सम्प्रदायवाद के कारण नहीं थी। गाँधी जी ने हिन्दू धर्म के आध्यात्मिक तथा नैतिक सार को ग्रहण किया। उनका कहना था कि यहूदी, ईसाई, इस्लाम आदि धर्मों का सार वही है जो हिन्दुत्व का। सत्य की खोज हिन्दू धर्म का मूल तत्व है। हिन्दू धर्म के प्रति उनके आर्कषण का कारण यह था कि यह धर्म अन्य धर्मों के साथ शान्तिपूर्वक रहने में विश्वास करता है और दावा नहीं करता कि यह सर्वश्रेष्ठ धर्म है।

ISSN- 2350-0530(O) ISSN- 2394-3629(P)
Impact Factor: 2.035 (I2OR)
DOI: 10.29121/granthaalayah.v1.i1.2014.6312

गाँधी जी ने सम्प्रदायवादी धर्म के स्थान पर मानवतावादी धर्म का पोषण किया जिसका चरम लक्ष्य सेवा है। गाँधी जी के धर्म के प्रमुख तत्व हैं- सत्य, प्रेम और अहिंसा। गाँधी जी के धर्म का आदर्श निष्काम कर्म है। गाँधी जी का कहना था कि "जो मनुष्य परिणाम का अध्ययन करता है, वह बहुधा कत्तव्य मुक्त हो जाता है, उसे अधीर घेर लेता है और वह क्रोध के वशीभूत हो जाता है, फिर वह न करने योग्य कार्य भी करने लग जाता है।"

गाँधी जी का धर्म, जाति और रूढ़ि मुक्त है, गाँधी का मुख्य आधार तपस्या और मानव सेवा है। रूढ़िवादिता पर आधारित धर्म सही अर्थो में धर्म नहीं है। वास्तविकता धर्म रूढ़ियों के बंधन को स्वीकार नहीं करता। गाँधी जी के अनुसार वह धर्म, धर्म नहीं है जिससे सत्य का हनन होता हो, नैतिकता का दमन होता हो तथा आत्मा का पतन होता हो। गाँधी जी ने कहा है "मैं ऐसे किसी धार्मिक सिद्धान्त को स्वीकार नहीं करता जो बुद्धि से न परखा जा सके और नैतिकता के विरुद्ध हो, मैं प्रत्येक धर्म-ग्रन्थ के बारे में अपनी निर्णायक बुद्धि का प्रयोग करता हूँ मैं किसी धर्म-ग्रन्थ के वचनों को अपनी बुद्धि पर हावी नहीं होने देता।"

गाँधी जी ने धर्म को साम्प्रदायिकता के बंधन से मुक्त कर दिया और उसे मानवता का धर्म बना दिया। गाँधी धर्म सहअस्तित्व का धर्म है, सहिष्णुता का धर्म है जो सभी धर्मों में विश्वास करता है। गाँधी जी के अनुसार सभी धर्म समान हैं। सिद्धान्त रूप में ईश्वर तो एक ही है, धर्म का आधार नैतिक है। अतः नैतिक आधार के विनष्ट होते ही मनुष्य की धार्मिकता भी विलुप्त हो जाती है। गाँधी जी के अनुसार सभी धर्म समान नैतिक नियमों पर आधारित हैं। मेरा नैतिक धर्म उन नियमों से बना है जो विश्व भर के मनुष्यों को एकता के सूत्र में बांधते हैं।

गाँधी जी के अनुसार धर्म केवल व्यक्तिगत शुद्धिकरण का साधन नहीं है, बल्कि वह एक शक्तिशाली सामाजिक बंधन है। गाँधी जी अपने रामराज्य की स्थापना भी धर्म पर आधारित कराना चाहते थे। धर्म से उनका अभिप्रायरू यह था कि समाज के सदस्य ईश्वरीय नियमों का सहयोग की भावना के साथ पालन करें। परोपकार, सहनशीलता, न्याय, भ्रातृत्व, शान्ति तथा सर्वव्यापी प्रेम के अर्थ में धर्म ही केवल विश्व के अस्तित्व का आधार बन सकता है। इसीलिए गाँधी जी ने कहा कि "समाज से धर्म का उन्मूलन करने का प्रयत्न कभी सफल नहीं हो सकता यदि वह कभी सफल हो गया तो उससे समाज का विनाश हो जायेगा।"

गाँधी जी ने कहा कि "मैं उस समय तक धार्मिक जीवन व्यतीत नहीं कर सकता था जब तक कि मैं स्वयं को सम्पूर्ण मानवता के साथ एकीकृत न कर लेता और यह उस समय तक नहीं कर सकता था जब तक कि राजनीति में भाग नहीं लेता। गाँधी जी सामाजिक तथा व्यक्तिगत जीवन के लिए पृथक-पृथक मापदण्ड स्वीकार नहीं करते थे। उनका मानना था कि मानवीय कार्यों के सभी क्षेत्रों में एक ही नैतिक संहिता लागू की जानी चाहिए। इस संबंध में गाँधी जी ने कहा था-"व्यक्ति की दो अन्तरात्माएं नहीं हो सकती एक व्यक्तिगत एवं सामाजिक और दूसरी राजनीतिक। मानवीय कार्यों के सभी क्षेत्रों में एक ही नैतिकता संहिता का पालन किया जाना चाहिए।

'अहिंसा परमो धर्म' वचन सारे भारत का है जैन और हिन्दू धर्म के बीच ऐसा कोई भेद नहीं है कि उन्हें भिन्न माना जाएं। गौतम बुद्ध और बौद्ध धर्म वही बात करता है जो हिन्दू धर्म। खटमल, मच्छर आदि क्षुद्र जन्तुओं को न मारने में दया धर्म है लेकिन इससे बढ़कर दया धर्म तो यह है कि मनुष्यों की हत्या न करें। मनुष्य को मारकर मच्छर को उबारने का प्रसंग आना भी संभव है। मैं तो इन दोनों तरह के प्रसंगों से छुटकारा पाने का मार्ग बताता हूँ और वह है दया धर्म। श्रवकों से और दूसरे सब लोगों से मैं कहता हूँ कि जीव दया का अर्थ केवल कीड़े-मकौड़े आदि सूक्ष्म जीवों को न मारना ही नहीं है। यह सच है कि उन्हें नहीं मारना चाहिए। लेकिन मनुष्य योनि के किसी भी जीव को धोखा नहीं देना चाहिए। इस क्षणभंगुर देह की खातिर जन्तुओं का नाश न कर, बल्कि तेरे मन में इस बात की आतुरता होनी चाहिए कि यह देह कल नष्ट होना हो तो आज ही नष्ट हो जाये और इसी से अहिंसा का जन्म हुआ। लेकिन जो खटमल को तो नहीं मारता परन्तु अपनी स्त्री-पुत्र पर हाथ उठाता है वह व्यक्ति न तो जैन है, न हिन्दू और न वैष्णव ही है, वह तो शून्य है।

जैनियों में साधु और साध्वियों बहुत हैं। उन्हें समय भी बहुत मिलता है। वे सच्ची तपश्चर्या क्यों न करें ? क्यों न वे शुद्ध ज्ञान प्राप्त करें ? वे क्यों न अपना अनुभूत ज्ञान समाज को दें। मैं जैन और हिन्दू धर्म को अलग-अलग नहीं समझता। स्यादवाद की सहायता से ही हिना अर्थात वैदिक धर्म और जैन धर्म का ऐक्य साधन कर सकता हूँ। बल्कि उसकी सहायता से मैंने कम से कम अपने लिए तो कभी का समस्त धर्म का ऐक्य साथन कर लिया है। श्वेताम्बर-दिगम्बर के झगड़ों को न्याय अखबारों और अदालतों से नहीं प्राप्त हो सकता वह तभी प्राप्त हो सकता है जब दोनों अथवा कोई एकपक्ष दोनों के लिए प्रायश्चित करें, और शुद्ध हो जाये जिससे यह भी न बन पड़े धर्म का नाम छोड़कार नम्रतापूर्वक मौन धारण कर लें।

जैन धर्म के दिगम्बर सम्प्रदाय के विषय में गाँधी जी का कहना है कि "मैं एक शुद्ध साधू की नग्नता की पूजा करते हुए भी मैं इतना अवश्य मानता हूँ कि दिगम्बर समाज के आचार्य जरा गहरा विचार करें और जो साधु समाज में विचरण करते हैं उनके लिए गुह्येन्द्रिय ठकने का कोई मार्ग खोज निकाले तो इसमें धर्म की रक्षा होगी और साधुओं की शोभा। पर यदि ऐसा नहीं किया जा सकेगा तो भी उसकी सार्वजनिक चर्चा करना तो हानिकर ही है।

जैन द्वारा भेंट किये गये मानपत्र में कहा गया है कि अपनी वाणी और कर्म दोनों में में जैन धर्म के उत्तम तत्वों को मूर्त करता हूँ। मैं तो संसार के सभी धर्मो के सत्तत्व में विश्वास करता हूँ और निरन्तर ऐसा प्रयत्न करता आया हूँ कि दुनिया के सभी धर्मों से तत्व को समझें और उन धर्मों में मुझे जो उत्तम लगे उसे मन, वचन और कर्म से अपनाऊँ और ग्रहण करूँ। मैं जिस धर्म को मानता हूँ वह मुझे न केवल प्रत्येक स्रोत से उसके सभी श्रेष्ठ तत्वों को ग्रहण करने की सुविधा देता है, बल्कि ग्रहण करना मेरा कर्तव्य बना देता है। अस्पृश्यता विरोधी आन्दोलन की परिकल्पना उसी भावना से की गई है। कारण यह 'मुझे मत छुओं' वाली भावना हरिजनों तक ही सीमित नहीं रही है, बल्कि इसने एक जाति के विरूद्ध दूसरी जाति को और एक धर्म के खिलाफ दूसरे धर्म को खड़ा कर दिया है। मैं तब तक चैन की सांस नही लूंगा जब तक इस आन्दोलन के परिणामस्वरूप इस देश में रहने वाली विभिन्न जातियों और समुदायों के बीच हार्दिक एकता स्थापित नहीं हो जाती।

एक भाई ने मेरे विचारों पर किसी जैन मुनि की राय लिख भेजी है और वे चाहते हैं कि मैं उस पर कुछ कहू-

1. अगर गाँधी जी के ख्यालात के मुताबिक सोलहों आने काम होने लगे तो इसमें जैन धर्म को नुकसान पहुँचेगा।

मुझे विश्वास है कि अगर मेरे विचार कार्यरूप में परिणत हो जाये तो उससे संसार का कल्याण होगा। अहिंसा का मतलब है प्रेम। शुद्ध प्रेम के ही बल पर सुधार करने के तरीके से नुकसान होना कैसे मुमकिन है।

ISSN- 2350-0530(O) ISSN- 2394-3629(P)
Impact Factor: 2.035 (I2OR)
DOI: 10.29121/granthaalayah.v1.i1.2014.6312

2. गाँधी ने स्तुति स्रोतों में बहुत अतिश्योक्ति की जाती है। उनमें महावीर के समान गुणों का आरोप करना नामुनासिब है।

मैं इस राय से बिलकुल सहमत हूँ यदि स्तुतिकार मेरी तारीफ के पुल बांधना छोड़कर केवल मेरे कर्तव्य का पालन करने में ही लगे रहें तो यह मेरी बहुत बड़ी स्तुति होगी और उसमें न तो अत्युक्ति की गुजांइश रहेगी और न किसी अन्य दोष की।

3. अन्त्यज चाहे कितना ही पवित्र क्यों न हो जाये फिर भी वह है तो आखिर अन्त्यज ही। इस विचार में न तो धर्म है और न विवेक।

4. गाँधी जी अपने को कट्टर वैष्णव मानते हैं। परन्तु इससे उनका मतलब कुछ और ही है। यदि गाँधी जी के तमाम विचार कार्यान्वित हो जाये तो तमाम धर्मों का नाश हो जायेगा। गाँधी जी डोंगी हैं।

मेरा विश्वास तो यह है कि यदि मेरे सभी विचारों के अनुसार काम होने लगे तो सभी मज़हबों की बढ़ती हो और तमाम मजहबी झगड़े समाप्त हो जाये। अगर मैं कहूँ कि मैं ढोंगी नहीं हूँ तो इसे कौन मानने लगा ? इसलिए ढोंगीपन के इल्जाम का मुनासिब जबाब तो मेरी मौत के बाद ही मिलेगा।

गाँधी जी का कहना है कि जो लोग मेरे विचारों के अनुसार चलते हैं उनहें तो यह देहाती कहावत याद रखनी चाहिए- "आम खाने से मतलब, पेड़ गिनने से क्या?" आरोपों का उत्तर देने से द्वेष पैदा होता है. वक्त फिजूल जाता है और एक दूसरे के प्रति मन के दुर्भाव प्रबल होते हैं सो अलग।

**संदर्भ ग्रन्थ**

[1] गाँधी वाङ्मय, खण्ड 16, पृ० 106

[2] वही, खाण्ड 25, पृ० 106

[3] वही .

[4] गाँधी वाड्मय, खण्ड 39, पृ० 86-87

[5] वही, खण्ड 53, पृ० 28.

[6] वही, खण्ड 63, पृ० 121-122.

[7] गाँधी वाङ्मय, खण्ड 28, पृ० 125-126